ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 299-304
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

कालिदास की काव्य–कला

डॉ0 चन्द्रेश कुमार पाण्डेय
एसो.प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, महाविद्यालय भटवली बाजार, उनवल, गोरखपुर (उ0प्र0), भारत

Received- 15.11.2018, Revised- 17.11.2018, Accepted - 20.11.2018 E-mail: dr.chandreshkumarpandey65@gmail.com

सारांश : *कविता कामिनी की कमनीय कान्ति, सुन्दर भावों की मनोहर छटा किस रसिक हृदय को आकर्षित नहीं करती। कविता की मधुरता, कोमलता, सुबोधता, सामान्य में भी विलक्षणता सहृदय मन को आकृष्ट करने के साधन हैं। जो नियति के नियमों से आबद्ध नहीं है, आह्लाद ही जिसका सर्वस्व है, जो परतन्त्र नहीं है, नये रसों से युक्त होने के कारण मनोहारिणी है, ऐसी कविता की कमनीयता के द्वारा सुन्दर भावों की अभिव्यक्ति करने वाले महाकवि कालिदास का संस्कृत वाङ्मय में अद्वितीय स्थान है। "प्रसाद की अगाधता, माधुर्य का मधुर निवेश, पदों की कोमलकान्त अवली, भाव का सौष्ठव, उपमा की विमलता तथा अपूर्वता, अलंकारों की रमणीयता – सबने कालिदास की कविता को विश्वविख्यात बना डाला है।"[1] घटनाओं की विचित्रता में, कल्पना के कोमलत्व में, भाषा की सरलता एवं लालित्य में तथा मानव चरित्रों के भावों की परख में कालिदास अनुपम हैं। "उनकी कलात्मक तूलिका नीरस में सरसता, कर्कश में कोमलता, कठोर में सामान्य में विलक्षणता, दुर्बोध में सुबोधता, काव्य में सर्वात्मकता और प्रसाद में माधुर्य का संचार करती है।"[2] कालिदास का काव्य सुवर्ण का संस्कार है जिसकी दीप्ति का प्रसार सहृदयों को अनायास अपनी ओर आकृष्ट करता है। कालिदास की काव्यकला में सहजता का स्वच्छन्द प्रवाह है। सजगता, सतर्कता तथा अलंकृति उसकी प्राणवायु है और अभिरामता एवं रमणीयता उसकी उच्छल तरंगें हैं जिसमें सहृदय डूबता–उतराता है। "उनकी भाषारूपी कालिन्दी और भावरूपी भागीरथी के मध्य सालंकृत पदावलीरूपी सरस्वती संगम का महनीय वैभव उपस्थित करती है।"[3] कला या सौन्दर्य हमें विचार के बन्धन से बाहर निकालकर, सृष्टि की कुसुमित अमराइयों की सुषमा के साम्राज्य में लाकर उपस्थित करता है।*

कुंजीभूत शब्द– कविता की मधुरता, कोमलता, सुबोधता, विलक्षणता, सहृदय मन, सर्वस्व, परतन्त्र, विचित्रता ।

कलाकार का प्राथमिक साक्षात्कार उसके अन्तर्मानस में होता है। वहीं पर कला की असली प्रतिमा निर्मित होती है और उस निर्मिति में कलाकार का रचनाशील मन ही सम्पूर्ण क्रिया करता है। दुष्यन्त शकुन्तला के रूप–सौन्दर्य पर रीझकर कह उठता है–"परमात्मा ने मानो सर्वोत्तम सुन्दरी का चित्र बनाया, हाथ से नहीं अपितु मन से सौन्दर्य समूह के द्वारा उसको बनाया, हाथ से बनाने पर उतनी सुन्दरता नहीं आ सकती। बनाने के बाद चित्र में प्राण का संचार किया। (इस तरह) अपूर्व या विलक्षण स्त्री–रत्न की सृष्टि की है।"[4] कला या कविता बिना मन के सक्रिय सहयोग के रूप ग्रहण नहीं कर सकती। मानसिक बिम्बों को कल्पना के द्वारा रूप प्रदान करना ही कला या सौन्दर्य है।

काव्य–वैशिष्ट्य– कालिदास वस्तु–विन्यास के प्रति बहुत सावधान हैं। वे अपने गृहीत विषय का उपयोग बहुत ही नैपुण्य के साथ करते हैं। 'कुमारसम्भव' में शिव–पार्वती की दैवी एवं दिव्य कहानी को नितान्त मधुर मानवी आस्वाद से मण्डित कर दिया है। "वस्तुतः कालिदास ने अपने काव्यों में सर्वत्र असम्भावित या काल्पनिक पात्रों का घटनाओं का चित्रण सम्भावित या यथार्थ भूमि पर कर, सम्भावना पक्ष की रक्षा की है। उनके पात्र देव या काल्पनिक होने पर भी काल्पनिक प्रतीत नहीं होते। इसमें वे पूर्ण सफल हुए हैं। 'कुमारसम्भव' के देव मानवी विचारों की अभिव्यक्ति करते हैं।"[5] लोगों की प्रीति के लिए कालिदास ने महादेव और देवी पार्वती को नायक और नायिका बनाकर परिचय दिया है; इतना ही नहीं, कालिदास ने देव चरित्र को मानव चरित्र के साँचे में ढालकर उसमें अमित सौन्दर्य उड़ेल दिया है। पार्वती के प्रणय को दैवी रूप न देकर मानवी रूप से परिपूर्ण कर दिया है। इसी प्रकार कामदेव और रति के मानवी रूप की अवधारणा हृदयाकर्षक बन सकी है।

'रघुवंश' और 'कुमारसम्भव' में त्याग की प्रधान संस्कृति प्रभावी है। शिरीष पुष्प से भी अधिक कोमलांगी पार्वती को अपने शारीरिक सुख की कोमल कल्पनाओं का तपस्या में त्याग करना पड़ा। शंकर जैसे योगी को लोक की रक्षा के लिए गृहस्थाश्रम का मार्ग स्वीकार करना पड़ा। इतना ही नहीं, काम–क्रीड़ा के द्वारा स्त्री–पुरुष का प्रेम प्रतिपादित करने वाले कामदेव को भी भस्म होना पड़ा। यह बहुमूल्य त्याग हमारी भारतीय संस्कृति का एक हिस्सा है।

'रघुवंश' महाकाव्य और 'कुमारसम्भव' की तरह 'मेघदूत' कालिदास का एक मनोरम गीतिकाव्य है। यह प्रेम से आर्द्र एवं कातर हृदय की मधुर उद्विग्नाओं का मनोरम कोष है। 'मेघदूत' में मेघ (बादल) को दूत बनाया गया है। 'मेघदूत' की रचना में कालिदास को जहाँ से प्रेरणा का मिलना

अनुमानित है, वे तीन कथानक हो सकते हैं। ऋग्वेद में इन्द्र ने सरमा (कुतिया) को दूती बनाकर असुरों के पास भेजा। भारतीय वाङ्मय में शायद यह पहली दूती है। वाल्मीकीय रामायण में राम ने हनुमान के द्वारा सीता को सन्देश भेजा है। महाभारत में दमयन्ती ने हंस के द्वारा राजा नल के पास अपना सन्देश भेजा है। ये तीनों सजीव (सपअम) सन्देशवाहक हैं और मानवी भाषा में बातें करते हैं, परन्तु कालिदास का मेघ निर्जीव वस्तु है, एक जड़ प्रकृति का रूप है, जो मानवी वाणी समझता है परन्तु बोलता कुछ नहीं। "भौतिक दृष्टि से मेघ धूम, ज्योति, सलिल एवं मरुत् का समवाय है और इसीलिए उसे सन्देशवाहन का कार्य नहीं सौंपा जा सकता। लेकिन, अधीरता एवं उत्कण्ठा से अभिभूत होने के कारण, यक्ष की स्थिति की असंगति का बोध नहीं होता और वह मेघ से प्रार्थना कर ही बैठता है, क्योंकि कामार्त व्यक्ति चेतन एवं अचेतन पदार्थों के समीप समान भाव से दीन बन जाते हैं–

धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः?
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयया?
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्त्ता हि प्रकृति कृपाणाश्चेतनाचेतनेषु।। (पूर्व मेघ–5)"[6] निर्जीव मेघ को दूत बनाकर अपनी प्राणप्रिया प्रियतमा के पास प्रेममय कुशल सन्देश भेजने वाले यक्ष के प्रेमोन्माद को पढ़कर कौन सहृदय उसके आदर्श स्नेह की बार–बार प्रशंसा नहीं करता है? 'मेघदूत' में मेघ का दूत के साथ रसिक रूप प्राधान्येन चित्रित किया गया है। वेत्रवती नदी, नीचे के पर्वत, उज्जयिनी की ऊँची अट्टालिकाएँ इत्यादि सभी विलास विभ्रम से युक्त हैं। "निर्विन्ध्या तथा गम्भीरा नदियाँ तो मानो उसकी विशिष्ट प्रेयसियाँ हैं जिनका रस वह रुक–रुककर आस्वादित करेगा।"[7] "सौदामिनी रूपी प्रियतमा का संयोग भी उसे प्राप्त है।"[8] वास्तव में उसकी रसीली (कामुकता भरी) प्रकृति के सामने चेतनाचेतन का द्वैत मिट जाता है; क्योंकि वह सबका है और सब उसके हैं।

यक्ष का प्रणय सन्देश किसी परकीया प्रेयसी के प्रति नहीं, अपितु अपनी पतिव्रता धर्मपत्नी के लिए है, प्रेषित किया गया है। वह रूपसी भी, यक्ष को पूर्ण विश्वास है, वियोग की गाढ़ी उत्कण्ठा के कारण कुछ ऐसी विवर्ण बन गयी होगी जैसे पाले की मारी कमलिनी, अन्य प्रकार की द्युतिवाली बन जाती है, मेघदूत के प्रवास हेतुक विप्रलम्भ का नैतिक आधार है जिसमें औपपत्य (उपपत्ति की अवस्था) को नहीं, दाम्पत्य को शापजन्य चुनौती मिली है। यक्ष का प्रणय सन्देश किसी परकीया प्रेयसी के प्रति नहीं, अपितु अपनी पतिव्रता धर्मपत्नी के लिए प्रेषित किया गया है। "छरहरी देह वाली, नवव्यक्त यौवन वाली, नन्हें–नन्हें दाँतों वाली, पके बिम्बाफल के समान लाल अधरों वाली, क्षीण कटि वाली, चकित हरिणी की लोल चितवन वाली, गहरी नाभि वाली, नितम्बों के भार से अलसायी गति वाली, स्तनों के भार से कुछ झुकी हुई, मानो अलका की युवतियों में विधाता की पहली सृष्टि है।"[9]

कालिदास इन्द्रियानुभूति तथा रसात्मक सौन्दर्य के कवि हैं। उन्होंने काव्यात्मक तत्त्व को ग्रहण कर उन्हें इन्द्रियसुलभ सौन्दर्य के परिक्षेत्र में लाकर कलात्मकता के द्वारा संयमित किया। "कल्पना के द्वारा किसी वस्तु का मानसिक साक्षात्कार कर लेने की क्षमता, जिसका आस्वाद बड़े–से–बड़े कवि अपने श्रेष्ठतम अन्तःप्रेरित क्षणों में ही किया करते हैं, कालिदास के साथ उनकी स्थायी, अमोघ शक्ति के रूप में वर्तमान रहती है।"[10] उत्प्रेक्षा के कतिपय दृष्टान्त दर्शनीय हैं– प्रयाग में गंगा–यमुना के संगम का वर्णन कवि ने यमुना जल को नीला तथा गंगाजल को श्वेत मानकर किया है। यमुना की तरंगों से लिपटी हुई गंगा की शोभा मनोरम है। "और कहीं पर (गंगा) शिवजी के उस शरीर की तरह दीख रही हैं जिस पर भस्म रूपी अंगराग लगा है (भस्म पोत रखी है) और काले–काले साँपों के भूषण पहने हुए हैं।"[11] 'कुमारसम्भव' की उत्प्रेक्षा, जहाँ कालिदास ने पार्वती के सौन्दर्य निर्माण के लिए प्रकृति में यत्र–तत्र बिखरे सौन्दर्यकणों को अपने भावानुरूप एकत्र कर एक विशिष्ट उज्ज्वल काया का निर्माण किया है। "उस विधाता ने मानो (सम्पूर्ण) सौन्दर्य को एक स्थान पर देखने की इच्छा से बड़े परिश्रम से यथोचित स्थान पर रखे गये सभी उपमानभूत द्रव्यों के समुच्चय (समूह) से रचा हो।"[12] विधाता ने प्रकृति के परिसर में यत्र–तत्र विखरे हुए उपमा द्रव्यों को एकत्र किया, उन्हें औचित्यपूर्ण रीति से उचित स्थान पर स्थापित कर पार्वती की मूर्ति का निर्माण किया केवल एकत्र सन्निविष्ट सौन्दर्य को देखने की इच्छा से। यह प्रयास अपूर्ण प्रकृति की पूर्णता के लिए ही मानो कवि का प्रयास था और इस संकलन व्यापार में अभीप्सित भाव–सौन्दर्य की वृद्धि करने के लिए कवि ने शास्त्र एवं लोक विरुद्ध समकालीन उपमा द्रव्यों के संकलन का प्रयास किया। वस्तुतः चारुत्व की प्रतीति ही काव्य का प्राण है।

कविता में रागात्मक अभिव्यक्ति प्रधान है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका में थिओडोर वेट्स ने भी इस बात की पुष्टि की है–No literary expression can properly speaking, be called poetry which is not, in a certain deep sense emotional; तात्पर्य यही है कि काव्य में भावना ही मुख्य रस बीज है और वह विभावादिकों से उद्दीप्त होने पर रस रूप में परिणत होती है, यही 'रस' काव्य की आत्मा है।"[13] कालिदास के काव्य संसार में ये सभी विशेषताएँ दृष्टिगत होती रहती हैं।

प्रकृति का मानवीकरण– कालिदास प्रकृति को मानवीय भावनाओं से ओतप्रोत एवं सजीव मानते हैं। उनकी

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

दृष्टि में प्रकृति निर्जीव पदार्थों का संघात मात्र नहीं, बल्कि वह जीवनीशक्ति से, कमनीय भावनाओं स प्राणिमात्र के लिए सहानुभूति से स्पन्दित होती है। प्रकृति मानव के साथ मैत्री के धागे में इस प्रकार बँधी हुई है कि वह उसके दुःख में दुःखी और सुख में सुखी रहती है। जब मनुष्य जीवन प्रकृति–जीवन से मिल जाता है तभी उसका महत्त्व होता है। अभी तक लोग अधूरा समझते आये हैं– यह कि संसार मनुष्य के लिए नहीं बना है – यह कि मनुष्य अपनी पूरी ऊँचाई तक तभी पहुँचता है जब वह मानवेतर जीवन का मूल्य तथा गौरव समझ जाता है। कवि प्रकृति के चित्रांकन में मानवी जीवन के आरोप से अनेक भावों की अभिव्यंजना करता है। वह जीवन, क्रिया–व्यापार तथा भावशीलता का आरोप करता है। कालिदास प्रकृति को अत्यन्त व्यापक सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण से देखते हैं। एक स्थान पर कवि ने देखा कि– "भ्रमर एक ही पुष्परूपी पात्र में भ्रमरी का अनुसरण करता हुआ मधु का पान करने लगा और कृष्णसार मृग के स्पर्शजन्य सुख से आँख मूँदकर खड़ी रहने वाली स्वकीया प्रिया मृगी को अपनी सींग से खुजाता हुआ खुशामद करने लगा।"[14] प्रकृति भी मानव जीवन की तरह सचेतन और सप्राण है। 'कुमारसम्भव' का एक ऐसा ही वसन्त के आगमन का मनोहारी दृश्य देखने योग्य है जिसमें कवि ने वृक्षों की शाखाओं के बढ़ने और झूलते हुए वासन्ती दृश्य से रमणियों की रूप–सम्पदा का आरोप किया है। "वृक्ष भी अपनी झुकी हुई डालियों को फैलाकर इन लताओं से लिपटने लगे, जिनमें पुष्पों के गुच्छों के रूप में बड़े–बड़े स्तन लटके हुए थे और नवकिसलयों के रूप में जिनके मनोज्ञ होठ हिल रहे थे।"[15] प्रकृति के मनोहर चित्रांकन के साथ कितना मधुर आसव चित्र की कटोरी में भर गया है। आचार्य हेमचन्द्र (काव्यानुशासनकार) के अनुसार इन्द्रियातीत जड़ तथा पशुपक्षियों पर मानवीय भावों का आरोप करने से रसाभास और भावाभास होता है। "निरिन्द्रियों पर सम्भोग के आरोपण से सम्भोगाभास होता है।"[16] 'अभिज्ञानशाकुन्तल' में लतापादप और वृक्ष प्रकृति के जड़ पदार्थ मात्र नहीं हैं, वरंच प्रणयसूत्र में बँधकर यौवनसुलभ आशा–आकांक्षा तथा दाम्पत्य भाव के प्रतीक बने हुए हैं। "शाकुन्तल के चतुर्थ अंक में मानवात्मा के प्रति प्रकृति की सहानुभूति का श्लाघ्य वर्णन हुआ है। वनदेवता शकुन्तला को आशीर्वाद देते हैं और उसे चमकीले रेशमी वसन तथा आभूषणों का उपहार प्रदान करते हैं। कोयल अपनी मधुर ध्वनि से वन का सन्देश सुनाती है। आकाशवाणी के रूप में वन देवों के आशीर्वाद उनकी प्राणप्यारी शकुन्तला को प्राप्त होते हैं।. .....मेघदूत में अवचेतन मेघ ही दौत्य कर्म नहीं करता, बल्कि सम्पूर्ण बहिःप्रकृति विरही यक्ष तथा विरहिणी यक्षप्रिया की समस्त वेदना, समस्त कारुण्य, समस्त मर्मद्रावक माधुर्य को मानो बाँट लेती है।"[17] कालिदास ने प्रकृति जीवन के विशिष्ट रूपों का जो ललित एवं मनोहारी चित्रण किया है वह हमेशा आनन्दित करने वाला है।

अन्तःप्रकृति एवं बाह्यप्रकृति का समन्वय– अन्तःप्रकृति और बाह्यप्रकृति का समन्वय कालिदास ने भली प्रकार से किया है। मनुष्य के दुःख–सुख का आभास प्रकृति में भी होता रहा है। जो घटना मानव ह्रदय में हो रही है, वैसी ही घटना बाह्यप्रकृति में भी होती है। 'शाकुन्तल' के चतुर्थ अंक में इसका सुन्दर समन्वय प्राप्त होता है। शकुन्तला की विदाई के अवसर पर सभी आश्रमवासी दुःखी हैं। "वृक्ष और वनदेवता भी उससे सहानुभूति प्रकट करते हैं। वे रेशमी वस्त्र, अलक्तक तथा आभूषण देकर शकुन्तला के प्रति घनिष्ठ प्रेम प्रकट करते हैं।"[18] आश्रमवासियों के साथ ही आश्रम के पशुपक्षी भी विदाई के कारण दुःखी हैं। "मृगियाँ दर्भ नहीं खा रही हैं, मोरों ने नाचना छोड़ दिया है और लताएँ पीले पत्ते रूपी आँसू बहा रही हैं।"[19] शकुन्तला की विदाई के अवसर पर शकुन्तला के द्वारा पुत्रवत् पाला गया मृग उसे आगे बढ़ने से रोकता है। "जिसके कुशाग्रों से बिंधे हुए मुँह में तूने घावों को भरने वाले इंगुदी के तेल लगाया था, वह श्यामाक (जंगली सांवा, चावल) की मुट्ठियों से पाला हुआ और पुत्रवत् माना हुआ मृग मेरा मार्ग नहीं छोड़ रहा है।"[20]

सौन्दर्य एवं प्रेम–चित्रण– नारी के सौन्दर्य का वर्णन करना कवियों का अभीष्ट रहा है। रमणियों के सौन्दर्य के नख–शिख वर्णन में वे अपनी सारी शक्ति लगा देते हैं। इस सरणि में हिन्दी के कवि भी तनिक पीछे नहीं हैं। कवि की कल्पना सौन्दर्य को अधिक चारुता प्रदान करती है–

कनक छरी सी कामिनी, काहे को कटि छीन।
कटि का कंचन काटि विधि, कुचन मध्य धरि दीन।।

संस्कृत के कवि भी इस क्षेत्र में कम नहीं हैं। शकुन्तला के सौन्दर्य के विषय में दुष्यन्त के विचार द्रष्टव्य हैं– "शकुन्तला के स्कन्ध देश में छोटी गाँठ देकर वल्कल बाँधा गया है जिससे उसका विशाल स्तन ढक गया है, अतएव शकुन्तला का नवीन कोमल शरीर पीले पत्तों में ढके हुए फूल की तरह शोभा नहीं पाता।"[21] दुष्यन्त को अपनी भूल का ज्ञान हो जाता है। स्वाभाविक रूप से सुन्दर शकुन्तला की रूपराशि में वल्कल वस्त्र पहनने पर भी वृद्धि ही होती है कोई हानि नहीं होती। वल्कल वस्त्र उसके शरीर के योग्य न होने पर भी उसकी कमनीयता को बढ़ाता ही है। सर्वमलंकारो भवति सुरूपाणाम् (अविमारक)। "जैसे शैवाल से ढके रहने पर कमल रमणीय लगता है जैसे चन्द्रमा की काली कालिमा उसकी शोभा को और भी बढ़ाती है उसी प्रकार यह भी कृशांगी वल्कल धारण करने पर अधिक सुन्दर प्रतीत होती है ठीक ही है, जिसकी आकृति मनोहर होती है, उसके लिए कौन–सी वस्तु आभूषण का काम नहीं देती।"[22] मलिन तथा तुच्छ वस्तु के

संयोग से भी उसकी शोभा अधिक बढ़ जाती है। ऐसी कौन–सी वस्तु है जो मधुर आकृतियों का मण्डन न बन जाय? कालिदास की दृष्टि सहज गुणों पर जाती है। "भारतीय सौन्दर्य भावना ने आभूषणों की आवश्यकता नहीं माना है, अपितु रूप के सहज गुणों के आवर्जन को महत्त्व दिया है।"[23] यद्यपि आभूषण रूप–सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए होते हैं लेकिन कालिदास ने उन्हें रूपनिखार के लिए आवश्यक नहीं माना है, अपितु उनका कथन है कि आभूषण अलंकृत करते हैं उतना ही वे स्वतः सौन्दर्य के संसर्ग से अलंकृत भी होते हैं–

कण्ठस्य तस्याः स्तन वन्धुरस्य
मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य।
अन्योन्य शोभा जननाद् वभूव
साधारणौ भूषणभूष्यभावः।।
–कुमारसम्भव (1–42)

कालिदास के लिए वास्तविक सौन्दर्य अकृत्रिम सौन्दर्य है, प्राकृतिक सौन्दर्य है। अतः उन्होंने शकुन्तला की तुलना पुष्पित लता से की है– "अधर नव पल्लव तुल्य है, दोनों बाहुएँ पतली शाखाओं के तुल्य हैं, अंगों में फूलों–सा मनोहर यौवन का सौन्दर्य है।"[24] 'कुमारसम्भव' महाकाव्य रूप–सौन्दर्य के वर्णनों से भरा पड़ा है। कवि ने पार्वती (नायिका) के सौन्दर्य वर्णन में तनिक भी न्यूवता को स्थान नहीं दिया है, भरपूर वर्णन किया है।

कालिदास का प्रेम भारतीय संस्कृति एवं आध्यात्मिकता का सम्मिलन है। उनकी दृष्टि में विषय–वासना से युक्त प्रेम वास्तविक प्रेम नहीं है। "तपस्या से निखरा हुआ प्रेम ही वास्तविक प्रेम है। अतएव पार्वती अपने शारीरिक सौन्दर्य से शिव को नहीं जीत सकी, परन्तु तपस्या के बाद उसके आगे शिव आत्मसमर्पण कर देते हैं और अपने आप को दास मानते हैं।"[25] ऐसा प्रेम जो नियन्त्रण एवं संयम के बाहर हो, जो भ्रमर वृत्ति का हो, वह कालिदास के मत में वास्तविक नहीं है। दाम्पत्य प्रेम ही उचित एवं वास्तविक प्रेम है। दाम्पत्य प्रेम का एक उदाहरण 'मेघदूत' से उल्लेखनीय है– यहाँ यक्ष का प्रणय सन्देश किसी परकीया प्रेयसी के प्रति नहीं, अपितु अपनी पतिव्रता धर्मपत्नी के लिए प्रेषित किया गया है। "भारतीय रूप साधना ने नारी की जो मोहक मूर्ति स्थिर की थी, उसका उल्लेख 'मेघदूत' की यक्षिणी के सौन्दर्य वर्णन में संक्षेपतः यों मिल जाता है– वह पतली श्यामा + युवती है। उसके दाँत कटे हीरे के समान नुकीले हैं। होठ पके बिम्बाफल के समान लाल हैं, कमर पतली है, डरी हुई हिरणी के से चकित नयनों से निहारती है, नाभि उसकी गहरी है, नितम्बों के भार से मन्थर गति से चलती है, स्तनों के बोझ से कुछ आगे झुकी हुई है। वह अलका की युवतियों में विधाता की प्रथम सृष्टि है।"[26] +श्यामा सोलह साल की युवती को कहते हैं, क्योंकि नये रोओं के निकल आने से कतिपय अंग साँवले बन जाते हैं।

अलंकार योजना– कविकुलह्रदय कालिदास की कविता कामिनी की विशेषता है कि सभी सह्रदयों को अनायास अपनी ओर आकर्षित करती है। इस आकर्षण क्रिया में उनके अलंकारों की महती भूमिका है। कोमलकान्त पदावलियाँ, माधुर्य की मधुर मिठास, उपमा की अपूर्वता तथा अलंकारों की छटा इनकी कविताओं में देखते ही बनती है। अलंकार इनके काव्यों में अनायास सिद्ध हैं, आयास की आवश्यकता नहीं पड़ी। इनका सर्वप्रिय अलंकार उपमा है। कालिदास की उपमाएँ संस्कृत साहित्य में अद्वितीय एवं चमत्कारिणी हैं। 'अभिज्ञानशाकुन्तल' का उदाहरण देखने योग्य है–

शमप्रधानेषु तपोधनेषु
गूढं हि दातात्मकमस्ति तेजः।
स्पर्शानुकूल इव सूर्यकान्ता
स्तदन्यतेजोऽभिभवात् वमन्ति।। –अभि.शाकु.(2–7)

संयम और इन्द्रिय–निग्रह जिनका मुख्य धन है, ऐसे तपस्वियों में जला देनेवाला गुप्त तेज होता है, क्योंकि स्पर्श के योग्य सूर्यकान्तमणियों के तुल्य (वे) अन्य तेज से तिरस्कृत होने पर ऋषियों का गुप्त तेज प्रकट हो जाता है। सूर्यकान्तमणि के पक्ष में – सूर्य के तेज से तिरस्कृत होने पर सूर्यकान्तमणि अपने तेज (किरणों) को प्रकट कर देती है। सूर्य के सामने सूर्यकान्तमणि रखने से उसमें से किरणें निकलने लगती हैं। उपमा का कल्पनामूलक उदाहरण प्रस्तुत है–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन
प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदनारे सा विरराज धेनु–
र्दिनक्षपामध्यगतेव संध्या।। –रघुवंश महाकाव्य(2–20)

राजा दिलीप और रानी सुदक्षिण के बीच गाय ऐसे सुशोभित हो रही थी जैसे– दिन और रात के मध्य सन्ध्या। पार्वती के जन्म के अवसर पर हिमालय की प्रशंसा में कवि कहता है–

प्रभामहत्या शिखयेव दीपस्त्रि–
मार्गयेव त्रिदिवस्य मार्गः।
संस्कारवत्येव गिरा मनीषी
तया स पूतश्च विभूषितश्च।। –कुमारसम्भव (1–28)

हिमालय पार्वती से किस प्रकार पवित्र एवं सुशोभित हुए। इसके समर्थन में तीन उपमाएँ हैं– महती प्रभा से युक्त शिखा (लौ) के द्वारा जैसे दीपक, गंगाजी के द्वारा जैसे स्वर्ग तथा संस्कारवती वाणी से मनीषी जैसे सुशोभित होता है। इस उदाहरण में लिंगसाम्य का भी ध्यान रखा गया है।

सौन्दर्य में प्राण डालने का कार्य नवयौवन का है। इसी अवस्था में अंगों में सौष्ठव निखरता है। पार्वती की बाल्यावस्था के बाद यौवनावस्था का अभिराम वर्णन द्रष्टव्य है–

उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं,
सूर्यांशुभिर्भिन्नमिवारविन्दम्।
वभूव तस्याः चतुरस्रशोभि,
वपुर्विभक्तं नवयौवनेन।। –कुमारसम्भव (1–33)

"–जैसे तूलिका से ठीक–ठीक रंग भरने पर चित्र खिल उठता है तथा जैसे सूर्य की किरणों का स्पर्श पाकर कमल खिल जाता है, वैसे ही नवयौवन के स्पर्श से पार्वती का सब प्रकार से शोभा देने वाला शरीर विभक्त हो गया, अर्थात् उसमें उभार आ गया। 'वपु' के 'विभक्त' हो जाने में भिन्न–भिन्न अंगों के पुष्ट एवं सुडौल होकर परस्पर असमान दिखने लगने का भाव व्यंजित है।"[27] महाकवि की रचनाओं में उपमा के उदाहरण भरे पड़े हैं।

भावाभिव्यक्ति एवं रस–सौन्दर्य में कालिदास की उपमाएँ अनुपम हैं और इसी के समकक्ष अर्थान्तरन्यास अलंकार की सूक्तियों से भरी रसधारा अविरल बहती है। कुछ उदाहरण सूक्ति के रूप में अत्यन्त प्रचलित हो गये हैं– दुष्यन्त को अपने अन्तर्मन के निर्णय पर विश्वास हो जाता है कि शकुन्तला क्षत्रिय के द्वारा विवाह करने योग्य है–

असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा
यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः।
सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु
प्रमाणमन्तःकरण प्रवृत्तयः।। –अभि.शाकु.(1–22)

शकुन्तला के माता–पिता में एक क्षत्रिय अवश्य है। मेरा मन पवित्र है वह विवाह के अयोग्य कन्या की ओर नहीं जा सकता। सूक्ति है– सन्देहास्पद स्थलों में सज्जनों के अन्तःकरण की प्रवृत्तियाँ प्रमाण होती हैं।

शकुन्तला जहाँ तिरस्कार के भय से पद्य रचना नहीं करना चाहती, तो दुष्यन्त मन में सोचता है–

अयं स ते तिष्ठति संगमोत्सुको
विशंकसे भीरु यतोऽवधीरणाम्।
लभेत वा प्रार्थयिता न वा श्रियं
श्रिया दुरापः कथमीप्सितो भवेत्।। –अभि.शाकु.(3–11)

जिससे तुम तिरस्कार की शंका करती हो वह तुमसे मिलने के लिए उत्कण्ठित है। सूक्ति है– चाहने वाले को लक्ष्मी मिले या न मिले, दोनों बातें सम्भव हैं, परन्तु लक्ष्मी जिस पर कृपा करना चाहे, वह दुर्लभ कैसे हो सकता है? लक्ष्मी के प्रार्थी सभी होते हैं (शकुन्तला भी लक्ष्मी है)।

रघुवंश महाकाव्य से अर्थान्तरन्यास विषयक प्रसंग उल्लेख्य है– वरतन्तु ऋषि के शिष्य कौत्स का महाराज रघु के सम्बन्ध में कथन है–

सर्वत्र नो वार्तवमेहि राजन्
नाथे कुतस्त्वय्यशुभं प्रजानाम्।
सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः
कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा।। –रघुवंश महाकाव्य(5–13)

हे राजन! आप हमारा सब प्रकार से कुशल समझें, आप जैसे स्वामी के होने पर प्रजा का अकुशल कैसे हो सकता है? सूक्ति है– भला कहीं सूर्य के प्रकाशमान रहते अन्धकारसमूह लोगों की दृष्टि को ढकने में समर्थ हो सकता है? अर्थात् नहीं।

संसार में जिसके पास धन है, ऐश्वर्य है उसी से लोग अपेक्षा करते हैं और उसका सम्मान भी करते हैं। जिसके पास धन होता है उसी से कुछ पाने की चाह रखते हैं।

कोशेनाश्रयणीयत्वमिति तस्यार्थसंग्रहः।

अम्बुगर्भो हि जीमूतश्चातश्चातकैरभिनंद्यते।।
–कुमारसम्भव(17–6)

खजाने (कोष) से एक तो सम्मान रहता है और धनवान आश्रयदाता बनता है। लोभ के कारण वह धन नहीं बटोरता। सूक्ति है– चातक उन्हीं मेघों का अभिनन्दन करता है जिसमें जल भरा रहता है। खाली व्यक्ति को कोई नहीं पूछता है।

रूपक, उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक, विरोधाभास आदि अलंकारों में भी उनके नैपुण्य की झलक देखने को मिलती है।

कालिदास ने अनुष्टुप, वसन्ततिलका, शार्दूलविक्रीडित, वंशस्थ, उपजाति, मालिनी, दुतविलम्बित, स्रक्धरा, एवं इन्द्रबज्रा आदि छन्दों का सुन्दर प्रयोग किया है। काव्य को सुरुचिपूर्ण बनाने के लिए वैदर्भी रीति का आश्रय लिया है। कालिदास ने कान्तासम्मित शैली का आश्रय लिया जो सबको आकर्षित करने वाली है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. संस्कृत सुकवि समीक्षा– कालिदास, पृ. 75; लेखक– आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्भा, विद्याभवन, वाराणसी, सन् 1978.
2. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास – कालिदास की शैली, पृ. 153; लेखक– डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, संस्कृत साहित्य संस्थान, 37, कचेहरी रोड, इलाहाबाद।
3. वहीं।
4. चित्रेनिवेश्य परिकल्पित सत्वयोगा
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु।
स्त्री–रत्न सृष्टिरपरा प्रतिभाति सा ये,
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्चतस्याः।।
–अभिज्ञान शाकुन्तल– द्वितीय अंक, श्लोक–9; प्रणेता– डॉ. कपिलदेव द्विवेदी आचार्य, प्रकाशक– साहित्य संस्थान, 4, मोतीलाल नेहरू रोड, इलाहाबाद– 211002, 1980.

5. संस्कृत महाकाव्य की परम्परा – संस्कृत के महाकाव्यों का परिशीलन, पृ. 345; लेखक– डॉ. केशवराव मुसलगाँवकर, चौखम्भा संस्कृत सीरीज, आफिस, वाराणसी–1, 1969.
6. महाकवि कालिदास– मेघदूत, पृ. 115; लेखक– डॉ. रमाशंकर तिवारी, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी–1, चतुर्थ संस्करण, 1980.
7. निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य, स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। –मेघदूत – (पूर्वमेघ–30) प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि। ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः।। –मेघदूत – (पूर्वमेघ–45).
8. तां कस्यांचिद्भवनवलभौ सुप्तपारावतायां, नीत्वा रात्रिं चिरविलसनात्खिन्न विद्युत कलत्र। –मेघदूत – (पूर्वमेघ–42).
9. तन्वीश्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी, मध्ये क्षामा चकित हरिणी प्रेक्षणा निम्ननाभिः। श्रोणिभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां या तत्र स्याद्युवति विषये सृष्टिराद्येव धातुः।। –मेघदूत – (उत्तरमेघ–42).
10. महाकवि कालिदास – कालिदास की काव्यकला, पृ. 350; लेखक – डॉ. रमाशंकर तिवारी
11. क्वचिद् कृष्णोरगभूषणेव, भस्मांगरागा तनुरीश्वरस्य। पश्यानवद्यांगि विभाति गंगा भिन्नप्रवाहा यमुना तरंगैः।। –रघुवंश महाकाव्य (13–57). आचार्य धारादत्त मिश्र कृत संस्कृत व्याख्या एवं हिन्दी रूपान्तर, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, वाराणसी, पटना, मद्रास; द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण, 1987.
12. सर्वोपमा द्रव्य समुच्चयेन यथाप्रदेशं विनिवेशितेन। सा निर्मिता विश्वसृजाप्रयत्ना देकस्थसौन्दर्यदिदृक्षयेव।। –कुमार सम्भव (1–49).
13. संस्कृत महाकाव्य की परम्परा – काव्यों के सामान्य सिद्धान्त का विवेचन, पृ. 30; डॉ. केशवराव मुसलगाँवकर।
14. मधुद्विरेफः कुसुमैकपात्रे पपौ प्रियां स्वां अनुवर्तमानः शृंगेण च स्पर्शनिमीलिताक्षीं मृगीमकण्डूयत् कृष्णसारः। –कुमारसम्भव (3/36).
15. पर्याप्तपुष्पस्तवकस्तनीभ्यः स्फुरत्प्रवालौष्ठमनोहराभ्यः लतावधूभ्यस्तरववोऽप्यवापुर्विनम्र शाखाभुजबन्धनानि। –कुमारसम्भव (3/39).
16. संस्कृत महाकाव्य की परम्परा – संस्कृत महाकाव्य के प्रेरक तत्त्व, पृ. 228; डॉ. केशवराव मुसलगाँवकर
17. महाकवि कालिदास – प्रकृति चित्रण, पृ. 310–11;
18. क्षौमंकेनचिदिन्दुपाण्डुतरुणा मांगल्माविष्कृतं निष्ठयूतश्चरणोपरागसुलभो लाक्षारसः केनचिद्। र्दत्तान्याभरणानि नः किसलयोद्भेदप्रतिद्वन्द्विभिः।। –अभिज्ञान शाकुन्तल (4–5).
19. उद्गलित दर्भकवलाः मृग्यः त्यक्तनर्तनाः मयूराः। अपसृत पाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।। –अभिज्ञान शाकुन्तल (4–12).
20. यस्य त्वया व्रणविरोपणमिंगुदीनां तैलं न्यषिच्यत् मुखे कुशसूचिविद्धे। श्यामाकमुष्टि परिवर्धितको जहाति सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते।। –अभिज्ञान शाकुन्तल (4–14).
21. इदमुपहितसूक्ष्मग्रन्थिना स्कन्धदेशे, स्तनयुगपरिणाहाच्छादिना वल्कलेन। वपुरभिनवमस्याः पुष्यति स्वां न शोभां कुसुमिव पिनद्धं पाण्डु पत्रोदरेण।। –अभिज्ञानशाकुन्तलम् (1–19).
22. सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति। इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।। –अभिज्ञानशाकुन्तलम् (1–20).
23. महाकवि कालिदास – सौन्दर्य भावना, पृ. 284; डॉ. रमाशंकर तिवारी।
24. अधरः किसलय रागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू। कुसुमिव लोभनीयं यौवनमंगेषु सन्नद्धम्।। –अभिज्ञानशाकुन्तल (1–21).
25. अद्यप्रभृत्यवनतांशि तवास्मि दासः क्रीत तपोभिः (कुमारसम्भव, 05/86).
26. तन्वीश्यामा शिखरिदशना पक्वबिंबाधरोष्ठी, मध्येक्षामा चकित हरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः। श्रोणिभारादलसगमना स्तोनम्रा स्तनाभ्यां या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्यव धातुः।। (उत्तरमेघ–22) महाकवि कालिदास – सौन्दर्य भावना, पृ. 291; डॉ. रमाशंकर तिवारी।
27. महाकवि कालिदास – सौन्दर्य भावना, पृ. 282; डॉ. रमाशंकर तिवारी।

*****